**ओ३म्**

**“दूसरों का कल्याण करना मनुष्य का वैदिक कर्तव्य”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 मनुष्यों के अनेक कर्तव्य होते हैं। कुछ अपने प्रति, परिवार के अन्य सदस्यों के प्रति और समाज व देश के प्रति आदि आदि। इन कर्तव्यों के विषय में वेद व वैदिक साहित्य, जिसमें ऋषि दयानन्द जी का समस्त साहित्य भी सम्मिलित है, अध्ययन करने पर अपने कर्तव्यों का बोध होता है जिससे मनुष्य की लौकिक व पारलौकिक उन्नति होती है। प्राचीन गुरुकुलीय परम्परानुसार स्नातक बनने पर गुरु से दीक्षा लेते समय आचार्य ब्रह्मचारी को उपदेश करता है **‘सत्य वद धर्म चर’** अर्थात् सदा सत्य बोलना व धर्म अर्थात् सत्य का आचरण करना। ऐसी ही एक शिक्षा ईश्वरीय ज्ञान ऋग्वेद के 7/19/10 मंत्र की सूक्ति **‘शिवो भूः’** में दी गई है। इस सूक्ति का अर्थ है कि **‘‘हे जीवात्मन् ! तू सबका कल्याण करने वाला बन।”** यहां ईश्वर ने वेद की इस सूक्ति के द्वारा परोपकार करने की प्रेरणा मनुष्यों को की है। दूसरों का कल्याण करने की प्रेरणा क्यों दी गई है? इस प्रश्न पर विचार करना समीचीन है। वेदाध्ययन करने वाला आस्तिक मनुष्य जानता है कि हम जड़ शरीर मात्र नहीं हैं अपितु हम एक चेतन जीवात्मा हैं जो अनुकूल परिस्थितियों में सुख व विपरीत परिस्थितियों में दुःख की अनुभूति करते हैं। जब हमारी परिस्थितियां विपरीत होती हैं तो हम दुःखी हो जाते हैं और उन्हें दूर करने के लिए प्रयास करते हैं। इस कार्य में हमें दूसरों से सहयोग की आवश्यकता भी होती है। हम चाहते हैं कि हमारे कहे बिना दूसरे हमारी सहायता कर दें जिससे हमारा कष्ट दूर हो जाये। सहायता मांगने में प्रायः मनुष्य हिचक का अनुभव करते हैं। कई परिस्थितियों में सहायता व सहयोग की याचना करनी भी पड़ती है। ऐसा करके हम अपने दुःख का निवारण व उनका आंशिक वा पूर्ण समाधान करते हैं। जो स्थिति हमारी होती है वही दूसरों के साथ भी समय समय पर होना स्वाभाविक ही है। ऐसा होने पर उन मनुष्यों की दूसरे मनुष्यों अर्थात् हमसे यह अपेक्षा होती है कि हम उनकी सहायता कर उनके कष्टों का निवारण करें। हमारा कर्तव्य बनता है कि जिस प्रकार दूसरों के सहयोग से हमारी विपरीत परिस्थितियां अनुकूल परिस्थितियों में परिवर्तित होती आयी हैं, उसी प्रकार हम भी उनसे उऋण होने के लिए दुखियों के प्रति वैसा ही व्यवहार कर उनकी सहायता व सहयोग करें। ऐसा करने से समाज में सभी मनुष्य सुखी बनाये जा सकते हैं। अतः हमारा कर्तव्य है कि कोई हमारी सहायता व सहयोग करे न करे, हम दूसरों की सहायता व उनसे सहयोग करना ही चाहिये जिससे समाज में सभी व अधिकांश मनुष्य सुखपूर्वक अपना जीवनयापन कर सके।

एक अन्य प्रकार से भी इस विषय में विचार करते हैं। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। हमें माता-पिता से शरीर मिला है, जिसका ऋण हमारे ऊपर होता है। माता-पिता व आचार्यों ने मुख्य रूप से हमें ज्ञान दिया व पुस्तकों आदि पढ़कर जो ज्ञान प्राप्त किया, उन सभी के हम आभारी व कृतज्ञ अर्थात् ऋणी होते हैं। हम उन ऋषियों के भी समान रूप से ऋणी हैं जिन्होंने सृष्टि की आदि से वर्तमान समय तक वेदों का ज्ञान सुरक्षित रखकर हमें यथार्थ रूप में प्रदान किया है। उन सब ज्ञात व अज्ञात ऋषियों के प्रति भी हमारा कृतज्ञता का भाव होना चाहिये क्योंकि एक प्रकार से हम उनके भी ऋणी हैं। यदि वह इस परम्परा का निर्वहन न करते तो आज हम वेद ज्ञान से वंचित होते और हमें ईश्वर, जीवात्मा व सृष्टि के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान न होता। इनका ज्ञान न होता तो हमें अपने कर्तव्यों व वास्तविक धर्म का भी ज्ञान न होता। तब हमारा जीवन अति कठिन व दुःखों से भरपूर होता। अतः हमारे जीवन में हम पर अनेक ऋण है। जड़ पदार्थों की चर्चा ही करें तो क्या हम वायु, जल, अग्नि, आकाश व पृथिवी का जितना उपयोग व उपभोग करते हैं क्या हम पर वह ऋण नहीं है? क्या हम उस ऋण को चुका सकते हैं? जितना पंचभौतिक तत्वों पर हमारा अधिकार है, वैसा व उतना ही सृष्टि के हर प्राणी का है जिसे ईश्वर ने इस सृष्टि में उत्पन्न किया है। हम जानते हैं कि यह सृष्टि हमने नहीं बनाई। इसे ईश्वर ने हम व हमारे समान अनन्त जीवात्माओं के लिए उनके कर्मानुसार उपयोग व उपभोग के लिए बनाया है। ईश्वर की वेदों में आज्ञा भी है कि संसार के साधनों व पदार्थों का त्यागपूर्वक उपभोग करें। जीवन को जीवित रखने के लिए जितना आवश्यक है, उतना भी हमें उपभोग करना चाहिये उससे अधिक नहीं। तभी संसार के अन्य लोग भी सुखी हो सकते हैं और हम भी सुखी रह सकते हैं। होता यह है कि माता-पिता व आचार्यों से अच्छे संस्कार न मिलने और अपने भीतर काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईष्या, द्वेष आदि के कुसंस्कार व प्रवृत्ति होने के कारण हम कर्तव्य पथ से च्युत होकर कर्तव्यहीन वा धर्महीन बन जाते हैं और अधिक उपभोग सहित संग्रह व परिग्रह में फंस जाते हैं जिससे हम दूसरें मनुष्यों के दुःख का कारण बनते हैं। इस प्रकार से विचार कर हमें वेदों की शिक्षाओं के अनुसार अपने जीवन को जीना है व दूसरों के हितों का भी ध्यान रखकर उनके सुखी जीवन में सहयोगी बनना है। ऐसा ही वेद की सूक्ति का अर्थ व भाव विदित होता है।

इस विषय में कुछ और विचार करते हैं। हम भोजन करते हैं, जो अन्न से बनता है, जिसे किसान उत्पन्न करते हैं। भवन में रहते हैं जिसका निर्माण मजदूरों व कारीगरों द्वारा होता है। हम जल पीते हैं तो इसके लिए अनेक सरकारी कर्मचारी व लोग उसे अनेक प्रकार से हमारे घरों तक पहुंचाते हैं। हमें श्वास-प्रश्वास हेतु शुद्ध वायु मिल सके इसके लिए हमारे पूर्वजों व कुछ वर्तमान पीढ़ी के लोगों ने भी देश भर में वृक्ष लगाये जिससे हमें आज प्राण व प्राणवायु प्राप्त हो रही है। हम जो वस्त्र पहनते हैं उसका निर्माण भी मजदूरों व कारीगरों द्वारा ही होता है। अतः हम इन सबके व ऐसे अनेकानेक लोगों के ऋणी बनते हैं जिनको हम जानते भी नहीं है। हम कह सकते हैं कि हम धन देकर उन उन लोगों से यह सब चीजें प्राप्त करते हैं। इसका उत्तर यह है कि हम जो मूल्य देते हैं वह उस वस्तु का पूरा पूरा मूल्य नहीं होता। एक किसान की ही बात करें। वह बीज खरीदता है, उसके लिए जमीन जो लाखों व करोड़ों की है, उसमें उसे बोता है, उसमें खाद व समय पर पानी देता है। खेत की निराई व गुडाई भी करता है। रात दिन काम करता है। कीटनाशकों का झिड़काव भी करता है जिसमें उसका धन खर्च होता है। किसान का काम चौबीस घण्टे का होता है। उसके बाद भी सूखा व बाढ़ अथवा समय पर वर्षा न होने से उसकी फसल का नुकसान हो जाता है। क्या उसे उसके श्रम व साधनों का जो उसने फसल की पैदावार में लगाये, पूरा पूरा मूल्य मिल पाता है। इसका उत्तर है कभी नहीं मिल सकता। अब यह भी विचार करें कि यदि जिन लोगों की सेवाओं से हम लाभान्वित हो रहे हैं वह अपनी सेवायें देना बन्द कर दें तो क्या हम जीवित रह पायेंगे। इसका उत्तर भी नहीं में है। अतः अपने व दूसरों के हित में हमें वेद की बाद को मानकर सृष्टि के पदार्थों का सीमित मात्रा में त्यागपूर्वक उपभोग करते हुए दूसरों के कल्याण अर्थात् लोकोपकार के लिए कार्य करना चाहिये। यही वैदिक व्यवस्था है और यही तर्क व युक्ति से भी सिद्ध होता है।

वेदों का कर्म फल सिद्धान्त बताता है कि हमें हमारे शुभाशुभ कर्मों का फल ईश्वर व उसकी व्यवस्था से मिलना सुनिश्चित है। कर्मों का फल हमें अवश्य मिलेगा और हमें उसे भोगना भी पड़ेगा। अतः वर्तमान व भविष्य अर्थात् परजन्म के दुःखों से बचने के लिए भी हम सबको वेदाज्ञा का पालन करते हुए निजी स्वार्थ से ऊपर उठकर दूसरों के कल्याण में सदैव तत्पर रहना चाहिये। इसी में हमारा व सबका हित वा कल्याण है। इसी के साथ इस चर्चा को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

 **-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**